Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.04, No.10, October,2025

एंटोनियो ग्राम्शी के "आधिपत्य/प्राधान्य" के सिद्धांत का भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में एक विश्लेषण

* **डॉ0 सन्तोष कुमार सिंह**
एसोसिएट प्रोफेसर और प्रभारी
समाजशास्त्र विभाग,एन0एम0एस0एन0दास(पी0जी0)कालेज, बदायूँ (उ.प्र.)243601

****

Abstract: *इस शोध पत्र में एंटोनियो ग्राम्शी के आधिपत्य के सिद्धांत का भारतीय सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि किस प्रकार भारतीय समाज में वैचारिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तर पर वर्चस्व की संरचनाएँ निर्मित और संचालित होती हैं। ग्राम्शी के विचारों के आलोक में यह शोध भारतीय परंपराओं, धार्मिक प्रतीकों तथा सामाजिक वर्ग व्यवस्था में निहित प्रभुत्व के तंत्रों का विश्लेषण करता है। साथ ही, यह अध्ययन आधुनिक भारत में शिक्षा, मीडिया और राजनीति के माध्यम से वैचारिक नियंत्रण और सहमति निर्माण की प्रक्रियाओं को भी रेखांकित करता है।*

Keywords: *आधिपत्य, वर्चस्व, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, वैचारिक प्रभुत्व, संस्कृति, राजनीति, शिक्षा, मीडिया, सहमति निर्माण, वर्ग–संबंध।*

****

1. प्रस्तावना

एंटोनियो ग्राम्शी (1891–1937) इटली के एक प्रख्यात मार्क्सवादी विचारक एवं दार्शनिक थे। इनका जन्म एलिस सार्डिनीया में 22 जनवरी 1891 को हुआ था। एंटोनियो ग्राम्शी मुख्य रूप अपनी अवधारणा ''आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व'' या हेजेमनी के लिए अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। ग्राम्शी ने पारंपरिक मार्क्सवाद के आर्थिक निर्धारणवाद को नकारते हुए यह स्पष्ट किया कि समाज में शासक वर्ग केवल भौतिक बल या राजनीतिक दमन द्वारा ही व्यक्तियों और समाज पर नियंत्रण स्थापित रखने का प्रयास करते हैं बल्कि वे सहमति और सांस्कृतिक–वैचारिक प्रभुत्व के माध्यम से भी अपना अधिकार स्थापित करते हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि यूरोप के पूंजीवादी समाज में सहमति या वैचारिक प्रभुत्व के के माध्यम से शासक वर्ग स्वयं को सत्ता में बनाए रखता है और सांस्कृतिक संस्थाओं का सहारा प्राप्त करता है। ग्राम्शी ने स्पष्ट किया था कि सांस्कृतिक संस्थाओं का सम्बन्ध नागरिक समाज से होगा जिसमें मुख्य रूप से परिवार, ,चर्च, स्कूल, मीडिया या प्रेस आदि शामिल होंगे। सारांश रूप से कहा जा सकता है कि इसमें सभी सामाजिक ,धार्मिक एवं शैक्षणिक संस्थाएं शामिल होंगी। एंटोनियो ग्राम्शी ने कार्ल मार्क्स के राज्य के कार्यों के प्रति भी असहमति प्रकट की थी। मार्क्स ने राज्य को एक शासन, शोषण और दबाने वाले संस्थान के रूप में प्रकट किया था जो इसके लिए सरकार, पुलिस, सेना और अन्य व्यवस्थाओं का प्रयोग करता है। ग्राम्शी का विचार मार्क्स के विचार से भिन्न है। वह राज्य को शोषण करने वाले संस्थान के साथ वैचारिकी संगठन भी मानते हैं। उनके अनुसार राज्य स्कूल, प्रेस, मिडिया आदि को केवल नियंत्रित ही नहीं करता है बल्कि इसके मध्यम से वह समाज में विचारों, आदर्श और मानदंडों को नया स्वरुप प्रदान करता है। राज्य लोगों की सहमति प्राप्त करने के लिए कल्याणकारी योजनायें

बनाता है और उसका क्रियान्वयन भी करता है। यह दर्शाता है कि राज्य आज केवल शोषण का अभिकरण नहीं रह गया है। ग्राम्शी अपनी प्रसिद्ध कृति "प्रिजन नोटबुक्स" में शक्ति के दो केंद्र बताएं है। एक को उन्होंने राजनीतिक समाज (दबाव/वर्चस्व पर आधारित संस्थाएँ) और दूसरे को नागरिक समाज (सहमति पर आधारित संस्थाएँ) के रूप में स्पष्ट किया। राजनीतिक समाज – यह सरकार, न्यायपालिका, पुलिस और सेना जैसे संस्थानों से मिलकर बना होता है। यह बलपूर्वक शासन करने में विश्वास रखता है। सिविल सोसाइटी– यह स्कूल, चर्च, मीडिया और सांस्कृतिक संस्थानों का समूह होता है। यह आम सहमति और विचारधारा के माध्यम से शासक वर्ग के विचारों और मान्यताओं को सामान्य बनाता है। ''आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व'' की अवधारणा यह दर्शाती है शक्ति का प्रयोग दोनों के मिश्रित स्वरूपों द्वारा किया जाता है। ग्राम्शी का मूल सिद्धांत "कल्चरल हेजेमनी'' या "सांस्कृतिक आधिपत्य/प्राधान्य" का सिद्धांत है जो यह स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से शासन करने वाले संस्थान ,राज्य या पूंजीपति अपने प्रभुत्व ,शक्ति और शासन को बनाए रखने के लिए सांस्कृतिक संस्थाओं का प्रयोग करते हैं। ग्राम्शी बताते हैं कि ये शक्तिशाली या पूंजीपति लोग सर्व प्रथम विमर्श के माध्यम से उस समाज की संस्कृति जैसे कि जन–रीतिओं, मान्यताओं, विश्वासों, विचारों, मूल्यों, रीति–रिवाजों और कथनों को एक नया स्वरुप अथवा कलेवर प्रदान करते हैं और इसको सर्व मान्य और सर्व स्वीकृत सांस्कृतिक आदर्श अथवा मानदंड के रूप में स्थापित कर देते हैं। इस प्रकार से वे अपने धन, बल और शासन को बनाए रखते है और किसी हिंसा एवं दबाव की शक्तियों का प्रयोग भी नहीं करते हैं। ग्राम्शी ने यह स्पष्ट किया कि शासक वर्ग अपने विचारों को इस प्रकार "सामान्य ज्ञान" के रूप में प्रस्तुत एवं प्रदर्शित करता है कि शोषित वर्ग उसे स्वाभाविक मान लेता है और उसका अनुकरण करने लगता है। गाम्शी न केवल एक दार्शनिक एवं विचारक के साथ वह एक राजनेता और लेखक भी थे। वह कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इटली के संस्थापक सदस्यों में से एक थे। उन्होंने उस समय के फासीवादी शासक मुसोलिनी के विचारों का जमकर विरोध किया था जिसके कारण उनको 1926 में जेल में डाल दिया गया। जेल में वह काफी बीमार रहने लगे और जब उन्हें उपचार के लिए बाहर निकला गया तब 27 अप्रैल 1937 को उनकी मृत्यु हो गयी।

ग्राम्शी का यह सिद्धांत विशेष रूप से हमारे देश भारत में और भी प्रासंगिक हो जाता है। भारत देश सांस्कृतिक विविधताओं वाला देश है। यहाँ की सामाजिक संरचना में जाति, धर्म, संस्कृति, प्रथाओं और परंपराओं का गहरा प्रभाव रहा है। भारतीय समाज में प्रभुत्व/आधिपत्य केवल भौतिक शक्ति के द्वारा ही नहीं, बल्कि धार्मिक महा ग्रंथों, महा वृतांतों, सामाजिक परंपराओं, शिक्षा व्यवस्था और राजनीतिक विमर्श के माध्यम से भी कायम किया गया है। इस विश्लेषणात्मक अध्ययन के माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि ग्राम्शी के विचार किस प्रकार भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता में निहित है और किस प्रकार से यह सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने में अपनी भूमिका निभातें हैं। भगवद्गीता का एक प्रसिद्ध श्लोक यह दर्शाता है कि – "स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।" (भगवद्गीता, 3.35)

प्रत्येक व्यक्ति का अपना धर्म (जाति– प्रथा, परम्परा आधारित कर्तव्य) ही उसका श्रेष्ठ मार्ग है, और अपने धर्म के पालन में अगर मृत्यु भी आ जाए तो अच्छा है लेकिन परधर्म का पालन भयावह या डरावना होता है। इसलिए अपने धर्म का पालन निश्चित रूप से करना चाहिए। ऐसे विचारों का प्रयोग समाज में इस धारणा को स्थापित करने के लिए किया गया कि व्यक्ति की सामाजिक स्थिति और कर्तव्य ईश्वर द्वारा निर्धारित और अपरिवर्तनीय हैं। यह सांस्कृतिक आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व का एक प्रत्यक्ष उदाहरण है।

2. अध्ययन की पृष्ठभूमिः

जैसा कि पूर्व में कहा गया है कि ग्राम्शी इटली की कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में से एक थे। उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय तानाशाह मुसोलिनी के विचारों का विरोध करने के कारण जेलो में ही बिताया था। जेल में प्रवास के दौरान के दौरान लिखी गई उनकी प्रसिद्ध कृति "प्रिजन नोटबुक्स" में उन्होंने राजनीति, समाज, शिक्षा, संस्कृति, और धर्म पर गहन चिंतन प्रस्तुत किया।ग्राम्शी का विचार था कि समाज की सत्ता–संरचना केवल आर्थिक उत्पादन संबंधों पर आधारित नहीं होती, बल्कि उसमें अधिसंरचानाएं जो कि सांस्कृतिक और संस्थागत व्यवस्था से सम्बंधित होती हैं वह भी शामिल होती हैं। संस्थाएँ जैसे कि संस्कृति, धर्म, शिक्षा, परिवार, मीडिया, विचारधारा, कानून, आदर्श, नियम और सांस्कृतिक परंपराएँ भी इस अवधारणा में निर्णायक भूमिका निभाती हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में जाति व्यवस्था, औपनिवेशिक शिक्षा और आधुनिक राजनीतिक विमर्श यह प्रदर्शित करते हैं कि प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व केवल बलध्शक्ति से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और वैचारिक माध्यमों से कायम रहता है।

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।" (भगवद्गीता 4.13)

इस श्लोक का प्रयोग शासक वर्ग ने यह दिखाने के लिए किया कि वर्ण व्यवस्था ईश्वरीय आदेश है और इसका पालन समाज का कर्त्तव्य है। ईश्वर का कहना है कि सभी वस्तुओं का रचयिता है। ईश्वर ने मानव समाज को गुणों और कर्मों के आधार पर चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में विभाजित किया है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में ग्राम्शी का आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व सिद्धांत अत्यन्त ही सार्थकता से लागू होता है। इसको समझने के लिए भारतीय समाज को निम्न लिखित काल खण्डों में अध्ययन करना आवश्यक है।

• प्राचीन भारतः धर्मग्रंथ, महाकाव्य, वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था और महान वृतांत प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व बनाए रखने के साधन/माध्यम बने।

• मध्यकालीन भारतः भक्ति, सूफी परंपरा और सामाजिक आन्दोलनों ने इस प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व को चुनौती देना प्रारम्भ किया।

• प्रति– आधिपत्य आंदोलन रू प्रमुख समाज सुधारकों ने प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व को चुनौती दी और वैकल्पिक विचारधाराओं को जन्म दिया।

• आधुनिक भारतः मीडिया, शिक्षा और राजनीति नए उपकरण बन गए और विमर्श को महत्त्व दिया जाने लगा हैं।

जाति व्यवस्था ने हजारों वर्षों तक सामाजिक विभाजन और शोषण को ''धर्म'' और ''कर्म'' के आधार पर उचित एवं वैध ठहराया। औपनिवेशिक शासन ने शिक्षा और प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से भारतीय समाज में अंग्रेजी सांस्कृतिक/वैचारिक श्रेष्ठता की मानसिकता विकसित की। स्वतंत्रता के बाद भी भारत में लोकतंत्र और संविधान की आड़ में जातीय वर्चस्व और वर्गीय प्रभुत्व की मानसिकता प्रभावी रही। रामचरितमानस की एक चौपाई इस मानसिकता को दर्शाती है–

ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी।
सकल ताड़ना के अधिकारी।।" (बालकाण्ड, 25)

यह चौपाई युगों तक स्त्रियों और शूद्रों की सामाजिक स्थिति को निम्नतर बताने के लिए प्रयोग की गई है। यही वह सांस्कृतिक–वैचारिक तंत्र है, जिसे ग्राम्शी ''प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व'' कहा हैं।

3. अध्ययन के उद्देश्य :

इस शोध का मुख्य उद्देश्य ग्राम्शी के प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व के सिद्धांत को भारतीय सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में समझना है। यह शोध विशेष रूप से निम्नलिखित बिंदुओं पर केंद्रित है–

1. ग्राम्शी के प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व के सिद्धांत की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि और उसकी विशेषताओं का अध्ययन करना।

2. भारतीय जाति व्यवस्था, औपनिवेशिक शासन और स्वतंत्रता के बाद के समाज में सांस्कृतिक वर्चस्व के रूपों का विश्लेषण करना।

3. यह समझना कि धर्म, शिक्षा, मीडिया और राजनीतिक विचारधाराएँ कैसे प्रभुत्व बनाए रखती हैं।

4. प्रति–आधिपत्य आंदोलन– जनजाति, महिला, दलित, किसान, और छात्र आंदोलन की भूमिका की पहचान करना।

5. भारतीय समाज में आधिपत्य और प्रति–आधिपत्य के बीच संघर्ष को ग्राम्शी के सिद्धांत के दृष्टिकोण से पहचाना ।

4. साहित्य की समीक्षा एवं विमर्श

भारतीय जाति व्यवस्था मूलतः एक सांस्कृतिक प्रभुत्व/आधिपत्य/प्राधान्य/वर्चस्व की संरचना है जिसे धार्मिक, वैदिक ग्रंथों, महान वृतांतों और विचारों ने वैधता प्रदान की। औपनिवेशिक शासन ने शिक्षा और प्रशासनिक संरचना के माध्यम से भारतीय उच्चवर्गीय चेतना को स्वरुप प्रदान कर वैचारिक आधिपत्य स्थापित किया। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में लोकतांत्रिक संस्थाएँ भी अधिकांशतः उच्च जातीय और वर्गीय प्राधान्य को पुनरुत्पादित करती रही हैं। मीडिया और समकालीन राजनीतिक विमर्श (जैसे हिंदुत्व, राष्ट्रवाद, उदारीकरण) सांस्कृतिक आधिपत्य के नए घटक बन गए हैं। दलित, आदिवासी और महिला आंदोलनों ने प्रति–आधिपत्य शक्तियों के रूप में आधिपत्य को चुनौती दी है और समाज में वैकल्पिक चेतना उत्पन्न किया है।

4.1 जाति व्यवस्था एक आधिपत्य संरचना के रूप में –

भारतीय समाज का सबसे बड़ी और ऐतिहासिक सामाजिक संरचना जाति व्यवस्था है। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था ने सामाजिक प्रभुत्व को स्थायी रूप से बनाए रखा। उच्च जातियाँ (ब्राह्मण और क्षत्रिय) न केवल आर्थिक और राजनीतिक सत्ता पर नियंत्रण रखती थीं, बल्कि धार्मिक मान्यताओं और

शास्त्रों के माध्यम से इसे वैधता भी प्रदान करती थीं। धार्मिक, वैदिक ग्रंथों, महान वृतांतों और डॉ जी एस घुरिए के विचारों द्वारा यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज इसका पालन आज भी कड़ाई से करता है। ग्राम्शी के दृष्टिकोण से यह केवल सामाजिक विभाजन का साधन नहीं बल्कि एक सांस्कृतिक आधिपत्य की जटिल व्यवस्था है। यह सिविल सोसाइटी में विचारधारा के माध्यम से आधिपत्य का एक उदाहरण है। जाति आधारित व्यवसाय को आज भी दलित/शूद्र और पिछड़े समाज के लोग अपनी स्वीकृत्ति प्रदान कर रहे हैं। मनुस्मृति में लिखा है कि

4.2 शूद्रः स्वभावतः सेवकः

यह श्लोक यह सिद्ध करता है कि सामाजिक अधीनता को "दैवीय और स्वाभाविक" मान्यता प्रदान की गई। 1–धार्मिक वैधता और शास्त्रीय आधार पर आधिपत्य–

मनुस्मृति और अन्य धर्मशास्त्रों ने समाज को वर्णों में बाँटकर एक वैचारिक संरचना निर्मित किया। मनुस्मृति और धर्मशास्त्रों को ''दैवीय'' और ''शाश्वत'' बताकर निम्न जातियों को अधीनस्थ भूमिका स्वीकार करने के लिए मजबूर किया।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।
(ऋग्वेद, पुरुषसूक्त, 10ण्90)

इस श्लोक में यह स्थापित किया गया कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ईश्वर के शरीर से उत्पन्न हुए हैं। यहाँ वर्णव्यवस्था को दैवीय उत्पत्ति बताकर उसे प्रश्नातीत बना दिया गया। यही वह प्रक्रिया है जिसे ग्राम्शी ''सहमति द्वारा आधिपत्य'' कहते हैं। इसी प्रकार, रामायण में वर्णित आदर्श राज्य (रामराज्य) को भी धार्मिक और सांस्कृतिक वर्चस्व का उपकरण बनाया गया।

रामराज्य बिसाल अति प्रजा सुखीसब होइ।
नहिं भयु बिकलपु काहू के, सब परस्पर प्रीति होइ।
(रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड)

यह आदर्श सामाजिक व्यवस्था का चित्रण है, जहाँ शांति और समृद्धि को ब्राह्मणवादी व्यवस्था के अंतर्गत वैध ठहराया गया।

4.3 मानसिक दासता और अन्तःकरण :

जाति व्यवस्था में शूद्र और दलितों को यह मानने के लिए प्रशिक्षित किया गया कि उनकी स्थिति उनके कर्मफल और धर्म के अनुरूप है। यह वही प्रक्रिया है, जिसमें शोषित वर्ग खुद अपनी ही अधीनता को स्वीकार करता है। रामचरितमानस में तुलसीदास की चौपाई इस मानसिकता को स्पष्ट करती है–

पूजहि विप्र सकल गुण हीना।
शूद्र न पूजहु ज्ञान प्रवीना।।

यह चौपाई इस बात का उदाहरण है कि समाज में जन्म आधारित प्राधान्य को सांस्कृतिक रूप से किस प्रकार संस्थागत किया गया।

धर्म और सांस्कृतिक वर्चस्वः

"धर्मो रक्षति रक्षितः।"

शासक वर्ग ने इसे यह दिखाने के लिए उपयोग किया कि धर्म की रक्षा करना समाज का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है।

"नमो धर्माय महात्मने" (महाभारत)–

धर्म को सर्वोच्च मानकर सामाजिक असमानताओं को स्वीकार्य बनाया गया।

भारतीय समाज में धर्म और धार्मिक संस्थानों ने सांस्कृतिक वर्चस्व को गहराई से प्रभावित

किया।मंदिर, पुराण, महाकाव्य (रामायण और महाभारत) तथा धार्मिक अनुष्ठानों के माध्यम से शासक वर्ग ने समाज में नैतिक और सांस्कृतिक नियंत्रण बनाए रखा।ष्राम राज्यष् की अवधारणा का प्रयोग आदर्श शासन व्यवस्था और सामाजिक मर्यादा को बनाए रखने के लिए किया गया। समाज को यह विश्वास दिलाया कि आदर्श राज्य वही है जहाँ शासक वर्ग नैतिक धर्म के संरक्षक हों। इस प्रकार धार्मिक कथाओं और परंपराओं ने सहमति तैयार की, जिससे सामाजिक संरचना स्थिर रही। धर्म ने भारतीय समाज में नैतिक वैधता और विचारधारात्मक आधिपत्य को गहराई से प्रभावित किया। रामायण में राम को "रामो विग्रहवान् धर्मः" कहा गया।जिसका अर्थ है कि राजा का शासन धर्म का मूर्त स्वरूप है।

"राम राज्य बसी तबहु, त्रैलोक बासी सुखी।
कहि न कोउ दुखी अब धरा, सब नर–नारी सुखी।।"

इस चौपाई ने सामूहिक चेतना में यह स्थापित किया कि आदर्श शासन व्यवस्था में राजा सर्वोच्च है और उसकी सत्ता नैतिकता से युक्त है। यह विचारधारा सहमति तैयार करने का उपकरण बनी।

4.4 औपनिवेशिक शासन और वैचारिक प्रभुत्वः

1. ब्रिटिश शासन ने भारतीय समाज पर केवल सैन्य बल के आधार पर बल्कि शिक्षा, कानून और संस्कृति के माध्यम से भी प्रभुत्व स्थापित किया। ब्रिटिश शासन ने शिक्षा, प्रशासन और कानून के माध्यम से भारतीय समाज में मानसिक आधीनता का निर्माण किया। अंग्रेजी शिक्षा और प्रशासनिक संस्थाएँ उच्च जाति और अभिजात वर्ग को औपनिवेशिक प्रणाली का वाहक बना दिया। 1835 में लार्ड मैकॉले का 'मायिनूट ओन एजुकेशन' वैचारिक आधिपत्य का उदाहरण है, जिसमें कहा गया कि हमें ऐसे भारतीय तैयार करने हैं जो "रक्त और वर्ण से भारतीय हों लेकिन विचारों और नैतिकता से अंग्रेज। "इस प्रकार, औपनिवेशिक शासन ने एक 'बाबू वर्ग' तैयार किया जिसने अंग्रेजी शासन को वैचारिक वैधता दी।

2. न्यायिक और प्रशासनिक संरचना के अंतर्गत ब्रिटिश कानून व्यवस्था ने''आधुनिकता'' और ''न्याय'' के नाम पर औपनिवेशिक हितों को बढ़ावा दिया। यहाँ पर ग्राम्शी का ''सिविल सोसाइटी'' का विचार लागू होता है जहाँ शासन केवल बल प्रयोग से नहीं बल्कि संस्थाओं और विचारधारा से भी अपनी पकड़ बनाए रखता है।

4.5 स्वतंत्रत भारत और राष्ट्रीय आधिपत्यः

स्वतत्रता 1947 के बाद भारतीय राज्य ने संविधान, लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता को राष्ट्रीय एकता का आधार बनाया। परंतु ग्राम्शी के अनुसार यह भी एक नए प्रकार का हेजेमोनिक प्रोजेक्ट था। जातिगत प्रभुत्व का पुनरुत्पादन हुआ। हालाँकि संविधान ने अस्पृश्यता को समाप्त किया, लेकिन शिक्षा, नौकरशाही और राजनीति में उच्च जातियों का वर्चस्व बरकरार रहा। लोकतांत्रिक ढाँचे में भी सत्ता का केंद्रीकरण उसी वर्ग के पास रहा, जिसे पहले से सामाजिक–आर्थिक संसाधनों का नियंत्रण प्राप्त था।स्वतन्त्र भारत में प्रगति और विकास के विमर्श ने तीव्र गति प्राप्त की। "राष्ट्र निर्माण" और "विकास" जैसे नारों के तहत समाज की असमानताओं को वैध ठहराया गया। जो वर्ग पिछड़े और दलित थे, उन्हें यह विश्वास दिलाया गया कि उनकी परेशानियाँ अस्थायी हैं और राष्ट्र की समृद्धि से अंततः सबको लाभ होगा। यह वही

Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.04, No.10, October,2025

प्राधन्यवादी रणनीति है जिसमें बहुसंख्यक जनता अपनी ही अधीनता में सहमति प्रदान कर देती है।

4.6 शिक्षा और आधिपत्यः

प्राचीन शिक्षा पद्धति (गुरुकुल) में शिक्षा का अधिकार केवल उच्च वर्गों को था। शिक्षा पर ब्राह्मणों का एकाधिकार था। वेद और उपनिषदों के अध्ययन का अधिकार केवल उच्च वर्गों को था। "शूद्रों के लिए वेद अध्ययन वर्जित है" यह विचार शिक्षा को आधिपत्य का उपकरण बनाता था। इस व्यवस्था ने सामाजिक असमानता को स्थायी बनाया और इसे "प्राकृतिक" और "ईश्वरीय" घोषित किया। आधुनिक शिक्षा प्रणाली और पाठ्यपुस्तकें भी लंबे समय तक शासक वर्ग की दृष्टि से लिखी जाती रहीं। ग्राम्शी के अनुसार शिक्षा केवल ज्ञान या कौशल देने का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज में प्रचलित शासक वर्ग की विचारधारा को वैध ठहराने और प्रसारित करने का उपकरण भी है। विद्यालय, कॉलेज और विश्वविद्यालय शासक वर्ग के मूल्यों को "सामान्य ज्ञान" (ब्वउउवद ेमदेम) के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इससे शोषित वर्ग भी उन मूल्यों को स्वाभाविक मानकर स्वीकार कर लेता है। आधुनिक भारत में आज शिक्षा प्रणाली के भीतर भी सामाजिक असमानताएँ बनी हुई हैं। निजी विद्यालय और उच्च शिक्षा संस्थान सम्पन्न वर्ग के हितों को मजबूत करते हैं। जबकि गरीब और हाशिए पर खड़े वर्ग सीमित अवसरों के कारण पिछड़ जाते हैं। यह असमानता शासक वर्ग के प्रभुत्व को बनाए रखने का काम करती है।

4.7 मीडिया, और समकालीन राजनीतिक आधिपत्यः

मीडिया और संस्कृति आधुनिक समाज में प्रभुत्व बनाए रखने के प्रमुख माध्यम हैं। भारत में यह और भी स्पष्ट है। चलचित्रों और टीवी धारावाहिकों में अक्सर स्त्रियों, दलितों और अल्पसंख्यकों को रूढ़ छवियों में प्रस्तुत किया जाता है। "आदर्श नारी" या "बलिदानी शूद्र" की छवि यही दर्शाती है कि प्रभुत्वशील मूल्य किस प्रकार समाज की चेतना में समाए रहते हैं। समाचार पत्र, टीवी चौनल, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म जनता को यह समझाते हैं कि कौन–सा मुद्दा महत्वपूर्ण है और कौन–सा नहीं। मीडिया सूचनाओं का चयन और प्रस्तुति इस प्रकार करता है कि शासक वर्ग या सत्ताधारी दल का दृष्टिकोण अधिक "स्वाभाविक" और "सही" लगे। चुनावी समय में मीडिया बार–बार कुछ मुद्दों (राष्ट्रवाद, सुरक्षा, धर्म, विकास) को केंद्र में रखता है और अन्य मुद्दों (बेरोजगारी, असमानता, शिक्षा) को हाशिए पर डाल देता है।इससे जनता की सोच शासक वर्ग की दिशा में ढलने लगती है। औपनिवेशिक काल में अंग्रेजों ने प्रेस पर नियंत्रण कर स्वतंत्रता आंदोलन की आवाज को दबाने का प्रयास किया। स्वतंत्र भारत में सार्वजनिक प्रसार माध्यम (जैसे दूरदर्शन) लंबे समय तक सरकार के प्रचार का माध्यम रहे। आज के दौर में निजी मीडिया और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म भी अक्सर राजनीतिक दलों के हितों के अनुसार एजेंडा सेट करते हैं। इसका परिणाम यह है कि जनता अपने मुद्दों को शासक वर्ग की नजर से देखने लगती है। यही "राजनीतिक आधिपत्य" है। भारतीय राजनीति में विभिन्न दल जनता की सहमति प्राप्त करने के लिए सांस्कृतिक प्रतीकों का उपयोग करते हैं। जातीय पहचान, धार्मिक त्योहारों और क्षेत्रीय संस्कृति को राजनीति में शामिल करके वे जनता को अपने विचारों से सहमत कराते हैं।चुनावी राजनीति में जाति

समीकरण और धार्मिक नारों का प्रयोग, जनता की सहमति प्राप्त करने का साधन है।

प्रति– आधिपत्य और वैकल्पिक आंदोलनः

ग्राम्शी का मानना था कि आधिपत्य कभी भी पूर्ण नहीं होता, बल्कि इसके विरुद्ध हमेशा प्रति–आधिपत्यवादी शक्तियाँ मौजूद रहती हैं।

भक्ति आंदोलन–

कबीर, रविदास, मीरा आदि ने जाति और धार्मिक प्रभुत्व को चुनौती दी। कबीर ने कहा–

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।"

यह जातिगत वर्चस्व के खिलाफ प्रतिवर्चस्व का उदाहरण है।

दलित आंदोलन–

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने जाति व्यवस्था की आलोचना करते हुए कहाः "जाति न केवल श्रम का विभाजन है, बल्कि श्रमिकों का विभाजन है। आंबेडकर को ग्राम्शी के "ऑर्गेनिक इंटेलेक्चुअल" की संज्ञा दी जा सकती है, जिन्होंने दलितों के लिए वैकल्पिक चेतना का निर्माण किया।

महिला आंदोलन

भारतीय नारीवादी आंदोलनों ने धार्मिक और सामाजिक ग्रंथों द्वारा प्रदत्त पितृसत्तात्मक वर्चस्व को चुनौती दी।

"न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति।"

यह मनुस्मृति का श्लोक है जो यह प्रदर्शि करता है कि स्त्री को बालकाल में पिता,युवा अवस्था में पति और वृद्धा और विधवा जीवन में पुत्रों के संरक्षण में रहना चाहिए। आधुनिक महिला आंदोलन इस वैचारिक प्रभुत्व के विरुद्ध संघर्ष का प्रति–आधिपत्यवादी रूप हैं।

4.8 छात्र, किसान और आदिवासी आंदोलनः

जेएनयू, हैदराबाद और अन्य विश्वविद्यालयों में हुए छात्र आंदोलनों ने यह स्पष्ट किया कि शिक्षा केवल प्रभुत्व बनाए रखने का साधन नहीं, बल्कि प्रति–आधिपत्य संघर्ष का भी मंच हो सकती है। इसी तरह किसान और आदिवासी आंदोलनों ने विकास के नाम पर संसाधनों के शोषण का विरोध किया।
आधुनिक संदर्भ में नर्मदा बचाओ आंदोलन और चिपको आंदोलन ने राज्य और पूंजीपतियों के वर्चस्व को चुनौती दी।

5.शोध निष्कर्ष –

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में ग्राम्शी का वर्चस्व सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि सत्ता केवल दमन से ही नहीं बल्कि धर्म, संस्कृति, शिक्षा और मीडिया जैसे वैचारिक तंत्रों के माध्यम से भी कायम रहती है। ग्राम्शी का आधिपत्य सिद्धांत भारतीय समाज की संरचना को समझने के लिए एक सशक्त दृष्टिकोण प्रदान करता है।
इस शोध के प्रमुख निष्कर्ष निम्नलिखित है –

5.1 सांस्कृतिक और वैचारिक आधिपत्य का ऐतिहासिक आधार : भारतीय समाज में वर्चस्व का आधार केवल बल और सत्ता पर आधारित नहीं रहा, बल्कि सांस्कृतिक, धार्मिक और वैचारिक तंत्रों में निहित रहा। प्राचीन ग्रंथों (मनुस्मृति, रामायण, महाभारत) और सामाजिक परंपराओं ने उच्च जातियों और पुरुष प्रधान वर्ग का प्रभुत्व सुनिश्चित किया।

5.2 जातीय आधार पर आधिपत्य : जाति व्यवस्था न केवल सामाजिक संगठन का साधन रही, बल्कि यह वैचारिक नियंत्रण का उपकरण भी बनी। निम्न जातियों

ने अपने ही अधीनता को आंतरिकीकृत किया, जो ग्राम्शी के "सहमति के माध्यम से वर्चस्व" के सिद्धांत को प्रत्यक्ष रूप से दर्शाता है।

5.3 औपनिवेशिक शासन का वैचारिक आधिपत्य :औपनिवेशिक शासन की वास्तविक शक्ति उसकी वैचारिक रणनीति में थी। उसने भारतीय जनता की चेतना को इस तरह प्रभावित किया कि अंग्रेजी राज को स्वाभाविक और वैध माना जाने लगा। धीरे–धीरे राष्ट्रवादी नेताओं, शिक्षकों, साहित्यकारों और सामाजिक सुधारकों ने इसी शिक्षा और विचारधारा को प्रति–आधिपत्य का साधन बनाकर औपनिवेशिक प्रभुत्व को चुनौती दी।

निष्कर्षतः औपनिवेशिक शासन का वैचारिक प्रभुत्व भारतीय समाज में सत्ता की स्थिरता का आधार बना, परंतु वही वैचारिक साधन उसके पतन का कारण भी सिद्ध हुए।

5.4 स्वतंत्रता उपरांत भारत में नवीन आधिपत्य संरचना: संविधान और लोकतंत्र के माध्यम से नई वैचारिक सहमति बनाई गई, लेकिन उच्च जातीय और वर्गीय प्रभुत्व धीरे–धीरे नए संरचना में पुनरुत्पादित हुआ। "राष्ट्र निर्माण" और "विकास" जैसे नारों के माध्यम से वर्चस्व को वैध ठहराया गया।

5.5 मीडिया और समकालीन राजनीतिक वर्चस्व

आधुनिक युग में मीडिया, फिल्म, सोशल मीडिया, धर्म और राजनीतिक विमर्श प्रमुख वर्चस्व साधन बन गए हैं। हिंदुत्व, राष्ट्रवाद और नव–उदारवाद के माध्यम से बहुसंख्यक पहचान को राष्ट्रीय पहचान के रूप में प्रस्तुत किया गया, जिससे अल्पसंख्यक और पिछड़े वर्ग हाशिये पर चले गए।

5.6 प्रतिवर्चस्व और सामाजिक प्रतिरोध : ग्राम्शी के अनुसार वर्चस्व कभी पूर्ण नहीं होता। भारतीय समाज में दलित, आदिवासी, महिला और छात्र आंदोलनों ने प्रतिवर्चस्व के माध्यम से प्रभुत्व को चुनौती दी। डॉ. भीमराव आंबेडकर, ज्योतिबा फुले, पेरियार और आधुनिक नारीवादी आंदोलन इस प्रतिवर्चस्व के "ऑर्गेनिक इंटेलेक्चुअल" के उदाहरण हैं।

5.7 सांस्कृतिक और धार्मिक ग्रंथों का दोहरा उपयोग : संस्कृत श्लोक और रामायण की चौपाइयाँ कभी वर्चस्व के औजार रहीं, तो कभी प्रतिवर्चस्व की प्रेरणा बनीं। यह दर्शाता है कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में धार्मिक और सांस्कृतिक उपकरण दोनों तरफ से शक्तिशाली भूमिका निभाते हैं।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में ग्राम्शी का आधिपत्य सिद्धांत न केवल अतीत को समझने का उपकरण है, बल्कि वर्तमान और भविष्य की सामाजिक चुनौतियों को विश्लेषित करने का भी सशक्त साधन है। ग्राम्शी का हेजेमनी सिद्धांत भारतीय सामाजिक व्यवस्था की गतिशीलता और परिवर्तनशीलता को समझने का एक आदर्श साधन है। यह न केवल प्रभुत्व की संरचना को उजागर करता है, बल्कि सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन और समानता के लिए मार्गदर्शन भी प्रदान करता है।

(References)

1. Gramsci, A. (1971). ***Selections from the Prison Notebooks*** (Q. Hoare & G. Nowell Smith, Eds.). New York: International Publishers.

2. Ambedkar, B. R. (1948). ***Annihilation of Caste***. Bombay: Government Press.
3. Tulsidas. (1990). ***Ramcharitmanas*** (Hindi Translation). Varanasi: Gita Press.
4. Manusmriti. (2008). ***The Laws of Manu*** (G. Buhler, Trans.). Delhi: Motilal Banarsidass.
5. Chatterjee, P. (1993). ***The Nation and Its Fragments: Colonial and Postcolonial Histories***. Princeton University Press.
6. Dirks, N. B. (2001). ***Castes of Mind: Colonialism and the Making of Modern India***. Princeton University Press.
7. Thapar, R. (2002). ***Early India: From the Origins to AD 1300***. University of California Press.
8. Omvedt, G. (1994). ***Dalits and the Democratic Revolution***. Sage Publications.
9. Jaffrelot, C. (2005). ***Dr. Ambedkar and Untouchability: Analysing and Fighting Caste***. Permanent Black.

*Corresponding Author: Santosh Kumar Singh
E-mail: alovelyupguy@gmail.com
Received: 11 September,2025; Accepted: 21 October,2025. Available online: 30 October, 2025
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License